...ान्ति द्विवेदी स्मृति-पुष्प-माला-२

...उपासना-विधि

(... हवन, भजन आदि)

संपादक

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी

निदेशक,

विश्वभारती अनुसंधान परिषद्

ज्ञानपुर (वाराणसी)

विश्वभारती अनुसंधान परिषद्

शान्ति-निकेतन

ज्ञानपुर (वाराणसी)

१९९१ ई०

मूल्य—तीन रुपये

ओम्

वैदिक-सन्ध्या

गायत्री (इससे शिखा बाँधें)

ओं भूर्भुवः स्वः । तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो
देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ।। यजु० ३६-३

अर्थ—हे परमात्मन्, आप सत्‌रूप, चित्‌रूप और आनन्दरूप हैं। जगत् के उत्पादक उस देव के श्रेष्ठ तेज को हम धारण करते हैं। वह हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित करे।

आचमन-मन्त्र (इससे ३ आचमन करें)

ओं शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ।। यजु० ३६-१२

हे परमात्मन्, दिव्य जल हमारे कल्याण, अभीष्ट-सिद्धि और तृप्ति के लिए हो। यह हमारे लिए कल्याण की वृष्टि करे।

अंग-स्पर्श-मन्त्र (इनसे अंगों को छुएँ)

ओं वाक्-वाक् । ओं प्राणः प्राणः । ओं चक्षुः चक्षुः ।
ओं श्रोत्रं श्रोत्रम् । ओं नाभि. । ओं हृदयम् ।
ओं कण्ठः । ओं शिरः । ओं बाहुभ्यां यशोबलम् ।
ओं करतल-करपृष्ठे ।।

हे ईश्वर, मेरी वाणी, प्राण, आँख, कान, नाभि, हृदय, कंठ और शिर पवित्र एवं शक्तिशाली हों। मेरे दोनों हाथों में यश और बल हो। मेरी हथेली और कर-पृष्ठ पवित्र हों।

मार्जन-मन्त्र (इनसे अंगों पर जल छिड़कें)

ओं भूः पुनातु शिरसि। ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः।
ओं स्वः पुनातु कण्ठे। ओं महः पुनातु हृदये।
ओं जनः पुनातु नाभ्याम्। ओं तपः पुनातु पादयोः।
ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि। ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।

हे प्राणरूप, दुःखनाशक, आनन्दरूप, महान्, उत्पादक, ज्ञान-रूप, सत्यरूप और व्यापक ईश्वर, मेरे शिर, नेत्र, कण्ठ, हृदय, नाभि, पैर, शिर आदि सभी अंगों को पवित्र करें।

प्राणायाम-मन्त्र (इनसे ३ प्राणायाम करें)

ओं भूः। ओं भुवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओं सत्यम्।

हे ईश्वर, आप प्राणरूप, दुःखनाशक, आनन्दरूप, महान्, उत्पादक, ज्ञानरूप और सत्यरूप हैं।

अघमर्षण मन्त्र

ओम् ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः॥ १॥
ओं समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदधद् विश्वस्य मिषतो वशी॥ २॥
ओं सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः॥ ३॥

ऋग्० १०-१९०-१ से ३
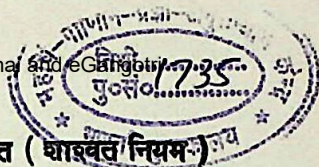
अत्यन्त तेजोमय ज्ञानरूपी तप से ऋत (शाश्वत नियम) और सत्य (कारण-सापेक्ष सत्य, स्थूल जगत्) उत्पन्न हुए। तत्पश्चात् रात्रि (प्रलय के बाद रात्रि) उत्पन्न हुई और तदनन्तर सूक्ष्म जलमय समुद्र उत्पन्न हुआ ॥ १ ॥

उस सूक्ष्म जलमय समुद्र से संवत्सर (वर्ष-गणना) उत्पन्न हुआ। गतिशील विश्व को वश में रखने वाले परमात्मा ने दिन-रात को बनाया ॥ २ ॥

परमात्मा ने पूर्ववत् सूर्य और चन्द्रमा, द्युलोक, पृथिवी, अन्तरिक्ष और विविध लोकों को बनाया ॥ ३ ॥

ओं शं नो देवीरभिष्टय०। (इससे ३ आचमन करें)

मनसा-परिक्रमा-मन्त्र

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥

अथर्व० ३-२७-१

पूर्व दिशा का अधिपति अग्नि के तुल्य प्रकाशस्वरूप ईश्वर है। बन्धन-रहित वह हमारा रक्षक है। सूर्य की किरणें उसके बाण हैं। उन्हें नमस्कार; अधिपतियों को नमस्कार; रक्षकों को नमस्कार; बाणों को नमस्कार और इन सबको नमस्कार। जो हमसे द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं, उसे हम आपकी न्यायरूपी दाढ़ में रखते हैं।

ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥

अथर्व० ३-२७-२

दक्षिण दिशा का अधिपति परम ऐश्वर्यवान् प्रभु इन्द्र है। कुटिलता से रक्षा करनेवाला जगदीश्वर हमारा रक्षक है। आप्त विद्वान्, पितर हमारे सहायक हैं। उन्हें नमस्कार; अधिपतियों को नमस्कार; रक्षकों को नमस्कार······(पूर्ववत्)।

ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥ अथर्व० ३-२७-३

पश्चिम दिशा का स्वामी सर्वश्रेष्ठ प्रभु वरुण है। पापों से बचानेवाला और उत्साह देनेवाला जगदीश्वर हमारा रक्षक है। अन्न आदि भोज्य हमारे सहायक हैं। उन्हें नमस्कार; अधिपतियों को नमस्कार··(पूर्ववत्)।

ओम् उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।

अथर्व० ३-२७-४

उत्तर दिशा का स्वामी शान्त प्रभु सोम हैं। दुर्भावनाओं को दूर करनेवाले जगदीश्वर रक्षक हैं। तेजस्वी विद्युत् हमारी सहायक है। उन्हें नमस्कार, अधिपतियों को नमस्कार,·····(पूर्ववत्)।

ओं ध्रुवा दिग् विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥

अथर्व० ३-२७-५

नीचे की ओर की दिशा के स्वामी सर्वव्यापक भगवान् विष्णु हैं। सत्योपदेशक रक्षक और वृक्ष-वनस्पति सहायक हैं। उन्हें नमस्कार, अधिपत्तियों को नमस्कार,···(पूर्ववत्)।

ओम् ऊर्ध्वा दिग् बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः॥

अथर्व० ३-२७-६

ऊर्ध्व दिशा के स्वामी भगवान् बृहस्पति हैं। सात्त्विक शुभ्र रक्षक हैं। वर्षा हमारी सहायक है। उन्हें नमस्कार, अधिपतियों को नमस्कार···(पूर्ववत्)।

उपस्थान मन्त्र

ओम् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।

देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्॥ यजु० ३५-१४

हे प्रभो! आप विश्व के आत्मा, देवों के देव, उत्कृष्टतम ज्योति-स्वरूप हैं। आपके सान्निध्य में हम अन्धकार से उत्कृष्ट, उत्कृष्टतर और उत्कृष्टतम आपकी स्वः-स्वरूप ज्योति को प्राप्त करें।

ओम् उदु त्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः।

दृशे विश्वाय सूर्यम्॥ यजु० ३३-३१

वेदों के उत्पन्न करनेवाले, अभिसरणीय देव परम प्रभु के पास उसकी पताकाएँ सम्पूर्ण विश्व के दर्शन के लिए एवं उसके साक्षात्कार के लिए पहुँचा देती हैं।

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्ष ँ् सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा॥
यजु० ७-४२

जो सूर्य भगवान् जड़ जगत् और प्राणियों की आत्मा है; सब में व्याप्त है; जो द्युलोक, पृथिवी और अन्तरिक्ष का धारण और रक्षण करनेवाला है; जो मित्र-वरुण-अग्नि का प्रकाशक, प्राण, अपान और अग्नि का प्रकाशक है; जो देवों का, दिव्य गुण-विशिष्टों का दुःख-नाशक परम उत्तम बल है; वह परमेश्वर हमारे हृदयों में यथावत् प्रकाशित रहे॥

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ् शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्॥ यजु० ३६-२४

जो ब्रह्म सबका द्रष्टा, धार्मिक विद्वानों का परम हितकारक तथा सृष्टि के पूर्व, पश्चात् और सत्य रूप से वर्तमान रहता है, उसी ब्रह्म को हमलोग सौ वर्ष पर्यन्त देखें, जीवें, सुनें, उसी का उपदेश करें, उसकी कृपा से किसी के अधीन न रहें। उसी की आज्ञा का पालन करें और उसकी कृपा से सौ वर्षों के उपरान्त भी हमलोग देखें, जीवें, सुनें, सुनावें और दीनता से रहित रहें।

गायत्री मन्त्र

ओं भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ यजु० ३६-३

हे परमात्मन्, आप सत्‌रूप, चित्‌रूप और आनन्दरूप हैं। जगत् के उत्पादक उस देव के श्रेष्ठ तेज को हम धारण करते हैं। वह हमारी बुद्धि को सन्मार्ग पर प्रेरित करे।

समर्पण-वाक्य

हे ईश्वर दयानिधे ! भवत्कृपया अनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः ।

हे परमात्मन्, आपकी कृपा से इस जप, उपासना आदि कार्य से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की हमें शीघ्र प्राप्ति हो।

नमस्कार-मन्त्र

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ॥ यजु० १६-४१

जगदीश्वर सुख-स्वरूप है, संसार के उत्तम सुखों का दाता है; कल्याणकर्ता, मोक्ष-सुखदाता है, अत्यन्त मंगल-स्वरूप है; उस प्रभु को हमारा बारंबार नमस्कार है।

यज्ञ-विधि

आचमन-मन्त्र (इन ३ मन्त्रों से ३ आचमन करें)

ओम् अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥ १ ॥

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥ २ ॥

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥ ३ ॥

अङ्ग-स्पर्श मन्त्र

बाईं हथेली पर जल लेकर दाएँ हाथ की मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से जल लगाकर अंगस्पर्श करें।

ओं वाङ्म आस्येऽस्तु ॥ इस मंत्र से मुख,
ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु ॥ इस मंत्र से दोनों नासिका-छिद्र,
ओम् अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु ॥ इस मंत्र से दोनों आँखें,
ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु ॥ इस मंत्र से दोनों कान,
ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु ॥ इस मंत्र से दोनों हाथ,
ओम् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु ॥ इस मंत्र से जंघा,
ओं अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ॥

(इस मन्त्र से सभी अंगों पर जल छिड़कें।)

ईश्वर-प्रार्थना-मन्त्र

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आसुव ॥ १ ॥ यजु० ३०-३

हे संसार के उत्पन्नकर्ता देव, आप हमारे सभी दुर्गुणों को दूर कीजिए और जो कल्याणकारी गुण हों, उन्हें हमें दीजिए ॥ १ ॥

ओं हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् ।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २ ॥
यजु० २५-१०

सूर्य आदि पदार्थों का जन्मदाता जो परमात्मा आदिकाल से था, वही संपूर्ण जगत् का एकमात्र स्वामी है। उसने ही इस पृथिवी और द्युलोक को धारण किया है। सुखस्वरूप उस देव को हम भक्तिरूपी हवि से प्राप्त करें ॥ २ ॥

ओं य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः ।
यस्य च्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ३ ॥
यजु० २५-१३

जो परमात्मा आत्मिक शक्ति और बल को देनेवाला है; सभी देव जिसके आदेश का पालन करते हैं; जिसकी कृपा अमृत है और जिसकी अकृपा मृत्यु है, उस सुख-स्वरूप देव को हम भक्तिरूपी हवि से प्राप्त करें ॥ ३ ॥

ओं यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद् राजा जगतो बभूव ।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ ॥
यजु० २५-११

जो परमात्मा अपनी महिमा से इस चर और अचर जगत् का एकमात्र राजा है और जो इस द्विपाद् (मनुष्यादि) तथा चतुष्पाद् (पशु आदि) का स्वामी है, उस सुख-स्वरूप देव को हम अपनी भक्तिरूपी हवि से प्राप्त करें ॥ ४ ॥

ओं येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वः स्तभितं येन नाकः ।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ५ ॥
यजु० ३२-६

जिस परमात्मा ने तेजोमय द्युलोक, दृढ़ पृथिवी, स्वर्ग और मोक्ष को धारण किया है; जो अन्तरिक्ष में विभिन्न लोकों को धारण किए हुए है, उस सुख-स्वरूप परमात्मा को हम भक्तिरूपी हवि से प्राप्त करें ॥ ५ ॥

ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ६ ॥

ऋग्० १०-१२१-१०

हे प्रजा के स्वामी परमात्मन्, तुम्हारे अतिरिक्त और कोई इस समस्त जगत् को अभिभूत नहीं करता है। जिस कामना से हम आपकी भक्ति करते हैं, वह हमें प्राप्त हो और हम ऐश्वर्य के स्वामी हों ॥ ६ ॥

ओं स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥ ७ ॥

यजु० ३२-१०

वह परमात्मा हमारा बन्धु, पिता और उत्पादक है। वह सभी स्थानों और लोकों को जानता है। उसमें सभी देव अमृत का पान करते हुए तृतीय (सर्वोत्तम) लोक में विचरण करते हैं ॥ ७ ॥

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम ॥ ८ ॥

यजु० ४०-१६

हे ज्ञानस्वरूप देव, आप हमें ऐश्वर्य के लिए सन्मार्ग से ले चलें। आप सभी ज्ञान और कर्मों के जानने वाले हैं। आप हमारे कुटिल पापों को नष्ट करें। हम आपको बहुत नमस्कार करते हैं ॥ ८ ॥

अथ स्वस्तिवाचनम्

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥१॥
स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा न स्वस्तये ॥२॥

ऋग्० १-१-१,९

स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः ।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥३॥

स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः ।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥४॥

विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये ।
देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥५॥

स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति ।
स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥६॥

स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्याचन्द्रमसाविव ।
पुनर्ददताऽघ्नता जानता सं गमेमहि ॥७॥

ऋग्० ५-५१-११ से १५

ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥

ऋग्० ७-३५-१५

येभ्यो माता मधुमत् पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः ।
उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये ॥९॥

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद् देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥१०॥

सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् ।
ताँ आ विवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ॥११॥

को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषो यति ष्ठन ।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥१२॥

येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः ।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥१३॥

य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥१४॥

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेंऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् ।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥१५॥

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् ।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा रुहेमा स्वस्तये ॥१६॥

विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः ।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ॥१७॥

अपामीवामप विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः ।
आरे देवा द्वेषो अस्मद् युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥१८॥

अरिष्टः स मर्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि ।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥१९॥

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमा रुहेमा स्वस्तये ॥२०॥

स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति ।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥२१॥

स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वस्त्यभि या वाममेति ।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥२२॥

ऋग्० १०-६३-३ से १६

इषे त्वोर्जे त्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा व स्तेन ईशत माघशँ सो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥२३॥

यजु० ११

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः ।
देवा नो यथा सदमिद् वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥२४॥

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवाना ँ रातिरभि नो निवर्तताम् ।
देवाना ँ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥२५॥

तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम् ।
पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥२६॥

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥२७॥

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥२८॥

यजु० २५-१४, १५, १८, १९, २१ ॥

अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥२९॥

त्वमग्ने यज्ञानां होता विश्वेषां हितः । देवेभिर्मानुषे जने ॥३०॥

साम० पू० १-१-१,२ ॥

ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः ।
वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥३१॥

अथर्व० १-१-१ ॥

इति स्वस्तिवाचनम् ॥

अथ शान्तिप्रकरणम्

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१॥

शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं न पुरन्धिः शमु सन्तु रायः ।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२॥

शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः ।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३॥

शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् ।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥४॥

शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥५॥

शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः ।
शं नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥६॥

शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः ।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥७॥

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु ।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥८॥

शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥९॥

शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥१०॥

शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ।११

शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः ।
शं न ऋभवः सकृतः सहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥१२॥

शं नो अज एकपाद् देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः ।
शं नो अपां नपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा ॥१३॥

ऋ० मं० ७ । सू० ३५ । मं० १-१३

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१४॥

शं नो वातः पवता ँ शंनस्तपतु सूर्यः ।
शं नः कनिक्रद्देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु ॥१५॥

अहानि शं भवन्तु नः श ँ रात्रीः प्रति धीयताम् ।
शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या ।
शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः ॥१६॥

शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ।
शंयोरभि स्रवन्तु नः ॥१७॥

द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥१८॥

तच्चक्षुर्देवहितंपुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥१९॥

यजु० ३६-८,१०,११,१२, १७, २४ ॥

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२०॥

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२१॥

यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२२॥

येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत् परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२३॥

यस्मिन्नृचः साम यजू ँ षि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः ।
यस्मिँश्चित्त ँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२४॥

सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२५॥
यजु० ३४ । मं० १ से ६

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शर्मवते ।
शं राजन्नोषधीभ्यः ॥२६॥
साम० उ० १-३

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे ।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥२७॥

अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं परोक्षात् ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥२८॥
अथर्व० १९-१५-५,६

इति शान्तिप्रकरणम् ॥

अग्न्याधान

ओं भूर्भुवः स्वः । गोभिल गृ० (१-१-११)

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवीव वरिम्णा ।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्नाद मन्नाद्यायादधे ।

यजु० ३-४

ओम् उद् बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते स ँ सृजेथामयं च । अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यजमानश्च सीदत ॥

यजु० १५-५४

समिदाधान-मन्त्र

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा । इद-मग्नये जातवेदसे इदं न मम ॥ आश्वला० गृह्य० १-१०-१२

इस मन्त्र से एक समिधा डालें ।

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् ।
आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ॥ यजु० ३-१

इससे और,

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा । इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम ॥ यजु० ३-२

इस मन्त्र से अर्थात् इन दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा डालें ।

ओं तन्त्वा समिद्भिरङ्गिरो घृतेन वर्धयामसि ।
बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा । इदमग्नयेऽङ्गिरसे इदं न मम ॥

यजु० ३-३

इस मन्त्र से तीसरी समिधा डालें ।

नीचे लिखे मन्त्र को पाँच बार पढ़कर हर बार एक-एक घृत की आहुति दें।

ओम् अयं त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदमग्नये जातवेदसे इदं न मम ॥

जल-प्रोक्षण

वेदी के पूर्व आदि दिशाओं में चारों ओर निर्देशानुसार जल छिड़कें।

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व। इससे पूर्व में।
ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व। इससे पश्चिम में।
ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व। इससे उत्तर में।

गोभिल गृह्य० १-३-१ से ३

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥

यजु० ३०-१

ओम् अग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदं न मम ॥
ओं सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदं न मम ॥

गोभिल गृ० १-८

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम ॥
ओम् इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय इदं न मम ॥

विशेष यज्ञों के लिए आहुतियाँ

ओं भूरग्नये स्वाहा । इदमग्नये इदं न मम ॥

ओं भुवर्वायवे स्वाहा । इदं वायवे इदं न मम ॥

ओं स्वरादित्याय स्वाहा । इदमादित्याय इदं न मम ॥

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः स्वाहा ॥

इदमग्निवायवादित्येभ्यः इदं न मम ।

स्विष्टकृदाहुति

इस मन्त्र से घृत अथवा भात की आहुति दें।

ओं यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं यद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते सर्वप्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां समर्धयित्रे सर्वान् नः कामान्त्समर्धय स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते इदं न मम ॥

शतपथ० १४-९-४-२४

प्राजापत्याहुति

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम ॥

इस मन्त्र को मन में बोलकर एक आहुति दें।

आज्याहुतयः

निम्न मंत्रों से चार घी की आहुतियाँ दें—

ओं भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः ॥ आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय इदं न मम ॥ १ ॥

ऋग्० ९-६६-१९

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय इदं न मम ॥ २ ॥

ऋग्० ९-६६-२०

ओं भूर्भुवः स्वः । अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् । दधद् रयिं मयि पोषं स्वाहा ॥ इदमग्नये पवमानाय इदं न मम ॥३॥

ऋग्० ९-६६-२१

ओं भूर्भुवः स्वः । प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये इदं न मम ॥ ४ ॥

ऋग्० १०-१२१-१०

अष्टाज्याहुतयः

इन मन्त्रों से घी की आहुतियाँ दें:—

ओं त्वं नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा ॥ इदमग्निवरुणाभ्याम् इदं न मम ॥ १ ॥ ऋग्० ४-१-४

ओं स त्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ । अव यक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा । इदमग्निवरुणाभ्याम् इदं न मम ॥ २ ॥ ऋग्० ४-१-५

ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृळय । त्वामवस्युराचके स्वाहा । इदं वरुणाय इदं न मम ॥ ३ ॥ ऋग्० १-२५-१९

ओं तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्र मोषीः स्वाहा । इदं वरुणाय इदं न मम ॥ ४ ॥ ऋग् १-२४-११

ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः इदं न मम । ५ ।

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमयासि । अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषज ँ् स्वाहा । इदमग्नये अयसे इदं न मम । ६ । कात्या० २५-११

ओम् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमं श्रथाय । अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा । इदं वरुणायाऽऽदित्यायादितये च इदं न मम । ७ । ऋग्० १-२४-१५

ओं भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ । मा यज्ञं हि ँ् सिष्टं मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा । इदं जातवेदोभ्याम् इदं न मम । ८ । यजु० ५-३

प्रातःकाल की आहुतियाँ

ओं सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा । १ ।
ओं सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा । २ ।
ओं ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा । ३ । यजु० ३-९
ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजूरुषसेन्द्रवत्या ।
जुषाणः सूर्यो वेतु स्वाहा । ४ । यजु० ३-१०

सायंकाल की आहुतियाँ

ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा । १ ।
ओम् अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा । २ ।
ओम् अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा । ३ । यजु० ३-९

इस तीसरे मन्त्र को मन से उच्चारण करके तीसरी आहुति दें ।

ओं सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्रवत्या ।
जुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा । ४ । यजु० ३-१०

दैनिक आहुतियाँ

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ।
इदमग्नये प्राणाय इदं न मम । १ ।
ओं भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा ।
इदं वायवे अपानाय इदं न मम । २ ।
ओं स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा ।
इदमादित्याय व्यानाय इदं न मम । ३ ।

ओं भूर्भुवः स्वरग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः स्वाहा ।
इदमग्निवाय्वादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः इदं न मम । ४।

ओम् आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा ।

ओं यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।

तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा । ६ ।

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव ।

यद् भद्रं तन्न आ सुव स्वाहा । ७ ।

ओम् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेम स्वाहा । ८ ।

ओं भूर्भुवः स्वः । तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा । ९ । (इससे ३ आहुति दें)

पूर्णाहुति

इस मन्त्र को तीन बार पढ़कर तीन पूर्णाहुति दें ।

ओं सर्वं वै पूर्णं ँ स्वाहा ।

— :o: —

वैदिक प्रार्थनाएँ

ओं पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।

पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥१॥

ओं तनूपा अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि ॥२॥

ओम् आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि ॥३॥

ओं वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि ॥४॥

ओम् अग्ने यन्मे तन्वा ऊनं तन्म आपृण ॥५॥

ओं मेधां मे देवः सविता आदधातु ॥६॥
ओं मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु ॥७॥
ओं मेधां मे अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ ॥८॥
ओं मयि मेधां मयि प्रजां मय्यग्निस्तेजो दधातु ॥९॥
ओं मयि मेधां मयि प्रजां मयीन्द्र इन्द्रियं दधातु ॥१०॥
ओं मयि मेधां मयि प्रजां मयि सूर्यो भ्राजो दधातु ॥११॥
ओं यत्ते अग्ने तेजस्तेनाहं तेजस्वी भूयासम् ॥१२॥
ओं यत्ते अग्ने वर्चस्तेनाहं वर्चस्वी भूयासम् ॥१३॥
ओं यत्ते अग्ने हरस्तेनाहं हरस्वी भूयासम् ॥१४॥
ओं तेजोऽसि तेजो मयि धेहि। ओं वीर्यमसि वीर्यं मयि धेहि।
ओं बलमसि बलं मयि धेहि। ओम् ओजोऽस्योजो मयि धेहि।
ओं मन्युरसि मन्युं मयि धेहि। ओं सहोऽसि सहो मयि धेहि।

ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्ति-रोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वं ँ शान्तिःशान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥ यजु० ३६-१७

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग् भवेत् ॥ १ ॥
त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम देवदेव ॥ २ ॥

प्रातःकाल उठते समय पढ़ने के मन्त्र

ओं प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम। १।
ऋग्० ७-४१-१

ओं प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह। २।
ऋग्० ७-४१-२

ओं भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। ३।
ऋग्० ७-४१-३

ओम् उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम। ४।
ऋग्० ७-४१-४

ओं भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुर एता भवेह। ५।
ऋग्० ७-४१-५

सोते समय बोलने के मन्त्र

ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति। दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु। १।
यजु० ३४-१

ओं येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः।
यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु। २।
यजु० ३४-२

ओं यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ३ ।
यजु० ३४-३

ओं येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ४ ।
यजु० ३४-४

ओं यस्मिन् ऋचः साम यजू ँ षि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथनाभा-विवाराः । यस्मिँश्चित्त ँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्प-मस्तु । ५ ।
यजु० ३४-५

ओं सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीषुभिर्वाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु । ६ ।
यजु० ३४-६

भोजन के पहले बोलने का मन्त्र

ओम् अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः ।
प्र प्र दातारं तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥
यजु० ११-८३

यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र

ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः । १ ।
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि । २ ।
पार० २-२-११

ईश्वर-भक्ति के भजन

(१)

यज्ञरूप प्रभो! हमारे भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल-कपट को, मानसिक बल दीजिए॥ १॥
वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक-सागर से तरें॥ २॥
अश्वमेधादिक रचाएँ, यज्ञ पर-उपकार को।
धर्म-मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को॥ ३॥
नित्य श्रद्धा भक्ति से, यज्ञादि हम करते रहें।
रोग-पीडित विश्व के संताप सब हरते रहें॥ ४॥
भावना मिट जाय मन से पाप अत्याचार की।
कामनाएँ पूर्ण होवें यज्ञ से नर-नारि की॥ ५॥
लाभकारी हो हवन हर प्राणधारी के लिए।
वायु-जल सर्वत्र हों शुभ गंध को धारण किए॥ ६॥
स्वार्थ-भाव मिटे हमारा प्रेम-पथ विस्तार हो।
'इदन्न मम' का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो॥ ७॥
हाथ जोड़ झुकाए मस्तक वन्दना हम कर रहे।
नाथ करुणारूप करुणा आपकी सब पर रहे॥ ८॥

(२)

पिता जी तुम पतित उधारन हार॥ टेक॥
दीन-शरण कंगाल के स्वामी, दुख के मोचन हार॥ १॥
इस जग-मायाजाल-भ्रमर में, सूझे न सार असार॥ २॥
सत्य-ज्ञान बिन दीखे न कुछ भी, करे असत्य आचार॥ ३॥
पाप-प्रवाह भयंकर जल में, डूबत हैं मझधार॥ ४॥
तुम्हरी दया बिन को समरथ है, करे दीन को पार॥ ५॥

(३)

मिलता है सच्चा सुख केवल, भगवान तुम्हारे चरणों में।
है विनती यह, छिन-छिन पल-पल, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ॥ १ ॥

यदि वैरी सब संसार बने, मेरा जीवन मुझ पर भार बने।
चाहे मौत गले का हार बने, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ॥ २ ॥

चाहे संकट ने मुझे घेरा हो, चाहे चारों ओर अन्धेरा हो।
पर चित्त न डगमग मेरा हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ॥ ३ ॥

चाहे अग्नि-परीक्षा में जलना हो, चाहे काँटों पर भी चलना हो।
चाहे छोड़ के देश निकलना हो, रहे ध्यान तुम्हारे चरणों में ॥ ४ ॥

(४)

पितु मातु सहायक स्वामि सखा, तुम ही इक नाथ हमारे हो।
जिनके कछु और अधार नहीं, तिनके तुम ही रखवारे हो ॥ १ ॥

सब भाँति सदा सुखदायक हो, दुख दुर्गुण नाशन हारे हो।
प्रतिपाल करो सिगरे जग को, अतिशय करुणा उर धारे हो ॥ २ ॥

भुलि हैं हम ही तुम को तुम तो, हमरी सुधि नाहिं बिसारे हो।
उपकारन को कछु अन्त नहीं, छिन ही छिन जो विस्तारे हो ॥ ३ ॥

महराज महा महिमा तुम्हरी, समुझें बिरले बुधिवारे हो।
शुभ शान्ति-निकेतन प्रेमनिधे, मन-मन्दिर के उजियारे हो ॥ ४ ॥

यहि जीवन के तुम जीवन हो, इन प्रानन के तुम प्यारे हो।
तुम सों प्रभु पाय प्रताप हरी, केहि के अब और सहारे हो ॥ ५ ॥

(५)

ओम् है जीवन हमारा ओम् प्राणाधार है।
ओम् है कर्ता विधाता, ओम् पालनहार है ॥ १ ॥

ओम् है दुख का विनाशक, ओम् सर्वानन्द है।
ओम् है वल-तेजधारी, ओम् करुणाकन्द है ॥ २ ॥

ओम् सबका पूज्य है, हम ओम् का पूजन करें।
ओम् ही के ध्यान से हम, शुद्ध अपना मन करें ॥ ३ ॥

ओम् के गुरु मन्त्र जपने से रहेगा शुद्ध मन।
बुद्धि दिन प्रतिदिन बढ़ेगी, धर्म में होगी लगन ॥ ४ ॥

ओम् के जप से हमारा, ज्ञान बढ़ता जायगा।
अन्त में यह ओम् हमको मुक्ति तक पहुँचायगा ॥ ५ ॥

(६)

विश्वपति के ध्यान में जिसने लगाई हो लगन।
क्यों न हो उसको शान्ति, क्यों न हो उसका मन मगन ॥ १ ॥

काम क्रोध लोभ मोह, शत्रु हैं सब महाबली।
इनके हनन के वास्ते, जितना हो तुझसे कर यतन ॥ २ ॥

ऐसा बना स्वभाव को, चित्त की शान्ति से तू।
पैदा न हो ईर्ष्या की आँच, दिल में करे नहीं जलन ॥ ३ ॥

मित्रता सब से मन में रख, त्याग के वैर-भाव को।
छोड़ दे टेढ़ी चाल को, ठीक कर अपना तू चलन ॥ ४ ॥

जिससे अधिक न है कोई, जिसने रचा है यह जगत्।
उसका ही रख तू आसरा, उसकी ही तू पकड़ शरण ॥ ५ ॥

छोड़ के राग द्वेष को, मन में तू उसका ध्यान कर।
तुझ पै दयालु होवेंगे, निश्चय है वह परमात्मन् ॥ ६ ॥

आप दयास्वरूप हैं, आप ही का है आसरा।
कृपा की दृष्टि कीजिये, मुझ पै हो जब समय कठिन ॥ ७ ॥

मन में मेरे हो चाँदना, मोक्ष का रास्ता मिले।
मार के मन जो 'केवल', इन्द्रियों को करे दमन ॥ ८ ॥

(७)

आर्य-ध्वज गीत

जयति ओम् ध्वज व्योम-विहारी।
विश्व-प्रेम-प्रतिमा अति प्यारी ॥ जयति० ॥

सत्य-सुधा बरसाने वाला, स्नेह-लता सरसाने वाला।
साम्य-सुमन विकसाने वाला, विश्व-विमोहक भवभयहारी ॥ जयति०

इसके नीचे बढ़ें अभय मन, सत्पथ पर सब धर्म-धुरी जन।
वैदिक-रवि का हो शुभ उदयन, आलोकित होवें दिशि सारी ॥ जयति०

इससे सारे क्लेश शमन हों, दुर्मति-दानव द्वेष दमन हों।
अति उज्ज्वल अति पावन मन हों, प्रेम-तरंग बहे सुखकारी ॥ जयति०

इसी ध्वजा के नीचे आकर, ऊँच नीच का भेद भुलाकर।
मिले विश्व मुद मंगल गाकर, पन्थाई पाखण्ड विसारी ॥ जयति०

इस ध्वज को हम लेकर कर में, भर दें वेद-ज्ञान घर-घर में।
सुभग शान्ति फैले जग भर में, मिटे अविद्या की अँधियारी ॥ जयति०

विश्व-प्रेम का पाठ पढ़ावें, सत्य-अहिंसा को अपनावें।
जग में जीवन ज्योति जगावें, त्यागपूर्ण हो वृत्ति हमारी ॥ जयति०

आर्य-जाति का सुयश अछय हो, आर्य-ध्वजा की अविचल जय हो।
आर्य-जनों का ध्रुव निश्चय हो, आर्य बनावें वसुधा सारी ॥ जयति०

(८)

आज मिल सब गीत गाओ, उस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित गाते हैं, गन्धर्व मुनिजन धन्यवाद ॥ १ ॥
मन्दिरों में कन्दरों में. पर्वतों के शीश पर।
देते हैं लगातार सौ सौ बार, मुनिवर धन्यवाद ॥ २ ॥
करते हैं जंगल में मंगल, पक्षिगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द मिल, गाते हैं स्वर भर धन्यवाद ॥ ३ ॥
कूप में, तालाब में, सागर की गहरी धार में।
प्रेम-रस में तृप्त हो, करते हैं जलचर धन्यवाद ॥ ४ ॥
शादियों में, कीर्तनों में, यज्ञ उत्सव आदि में।
मीठे स्वर से चाहिए करें, नारी नर सब धन्यवाद ॥ ५ ॥
गान कर 'अमीचन्द' भजनानन्द ईश्वरकी स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर धर धन्यवाद ॥ ६ ॥

(९)

अखिलाधार अमर सुखधाम, एक सहारा तेरा नाम। टेक।

कैसी सुन्दर सृष्टि बनाई, चन्द्र सूर्य सी ज्योति जगाई।
कैसी अद्भुत वायु बहाई, एक से एक विलक्षण काम ॥ १ ॥

सुन्दर सरस सुधा-सम पानी, अमृत अन्न खाँय सब प्राणी।
गुण गावें ज्ञानी और ध्यानी, भजें निरन्तर आठों याम ॥ २ ॥

पत्र-पत्र रंग रूप निराला, पुष्प-पुष्प में गंध विशाला।
फल-फल पृथक् प्रेम-रस-प्याला, लीला तेरी ललित ललाम ॥ ३ ॥

सज्जन सद्गुण गरिमा गावें, धर्म-धुरीण ध्यान में लावें।
कुटिल कुशील कुपात्र न पावें, हे जगदीश! आपका धाम ॥ ४ ॥

आप अमर सत्पथ के स्वामी, मैं हूँ 'अमर' असत्पथगामी।
एक नाम के दोनों नामी, मैं गुण-रहित आप गुण-ग्राम ॥ ५ ॥

(१०)

तुम हो प्रभू चाँद, मैं हूँ चकोरा,
तुम हो कमल-फूल, मैं रस का भौंरा ॥ १ ॥
ज्योति तुम्हारी का मैं हूँ पतंगा,
तुम आनन्द-घन हो, मैं हूँ वन का मोरा ॥ २ ॥
जैसे है चुम्बक की लोहे से प्रीति,
मुझे खींच लेवे प्रभू प्रेम तोरा ॥ ३ ॥
पानी बिना जैसे हो मीन व्याकुल,
इसी भाँति तड़पाय तेरा विछोरा ॥ ४ ॥
एक बूंद जल का मैं प्यासा हूँ प्यारे
करो प्रेम-वर्षा हरो ताप मोरा ॥ ५ ॥

(११)

प्रेमी भर कर प्रेम में, ईश्वर के गुण गाया कर।
मन मन्दिर में गाफिला झाड़ू रोज लगाया कर ॥ १ ॥ प्रेमी०
सोने में तो रात गँवाई, दिन भर करता काम रहा।
इसी तरह बरबाद तू बन्दे, करता अपना आप रहा।
प्रातः उठकर प्रेम से, सत्संगति में जाया कर ॥ २ ॥ प्रेमी०
दुखिया पास पड़ा है तेरे, तूने मौज उड़ाई क्यों।
भूखा प्यासा पड़ा पड़ोसी, तूने रोटी खाई क्यों।
सबसे पहले पूछकर भोजन को तू खाया कर ॥ ३ ॥ प्रेमी०
नर-तन के चोले का पाना, बच्चों का कोई खेल नहीं।
जन्म-जन्म के शुभ कर्मों का, होता जब तक मेल नहीं।
नर-तन पाने के लिए, उत्तम कर्म कमाया कर ॥ ४ ॥ प्रेमी०
देख दया जगदीश्वर की, वेदों का जिन ज्ञान दिया।
सोच समझ ले अपने मन में, कितना है कल्याण किया।
सब कर्मों को छोड़कर, प्रभु को ही तू ध्याया कर ॥ ५ ॥ प्रेमी०

(१२)
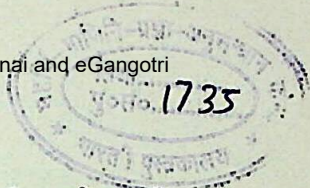
शरण प्रभू की आओ रे! यही समय है प्यारे ॥ १ ॥
आओ हरि गुण गाओ रे! यही समय है प्यारे ॥ २ ॥
उदय हुआ ओम् नाम का भानु, आओ दर्शन पाओ रे ॥ ३ ॥ यही०
अमृत झरना झरता इससे, पीके अमर हो जाओ रे ॥ ४ ॥ यही०
ईर्ष्या द्वेष कपट को त्यागो, सत्य में चित्त लगाओ रे ॥ ५ ॥ यही०
हरि की भक्ति बिना नहिं मुक्ति, दृढ़ विश्वास जमाओ रे । ६ । यही०
कर लो नाम हरी का सुमिरन, अंत को ना पछताओ रे ॥ ७ ॥ यही०
छोटे-बड़े सब मिलके खुशी से, गुण ईश्वर के गाओ रे ॥८॥ यही०

(१३)

जय जय पिता परम आनन्द-दाता,
जगदादि-कारण मुक्ति-प्रदाता ॥ १ ॥
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे,
तू सृष्टि का स्रष्टा तू धर्ता संहर्त्ता ॥ २ ॥
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू है स्थूल इतना,
कि जिसमें यह ब्रह्मांड सारा समाता ॥ ३ ॥
मैं लालित व पालित हूँ पितृ-स्नेह का,
यह प्राकृत संबन्ध है तुझसे ताता ॥ ४ ॥
करो शुद्ध निर्मल मेरी आत्मा को,
करूँ मैं विनय नित्य सायं व प्रातः ॥ ५ ॥
मिटाओ मेरे भय जो आवागमन के,
फिरूँ न जन्म पाता और बिलबिलाता ॥ ६ ॥
बिना तेरे है कौन दीनों का बन्धु,
कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता ॥ ७ ॥
'अमी' रस पिलाओ कृपा करके मुझको,
रहूँ सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता ॥ ८ ॥

(१४)

दुख दूर कर हमारा, संसार के रचैया।
जल्दी से दो सहारा, मँझधार में है नैया ॥ १ ॥
तुम बिन कोई हमारा, रक्षक नहीं यहाँ पर।
ढूंढ़ा जहान सारा, तुमसा नहीं रखैया ॥ २ ॥
दुनियाँ में खूब देखा, आँखें पसार करके।
साथी नहीं हमारा, माँ बाप और भैया ॥ ३ ॥
सुख के सभी हैं साथी, दुनियाँ के मित्र सारे।
तेरा ही नाम प्यारा, दुख-दर्द से बचैया ॥ ४ ॥
चारों तरफ से हमपर, गम की घटा है छाई।
सुख का करो उजाला, प्रकाश के करैया ॥ ५ ॥
अच्छा बुरा है जैसा, राजी मैं 'राम' रहता।
चेरा है यह तुम्हारा, सुध लेओ सुध लिवैया ॥ ६ ॥

(१५)

हुआ ध्यान में ईश्वर के जो मगन, उसे कोई क्लेश लगा न रहा।
जब ज्ञान की गंगा में नहाया, तो मन में मैल जरा न रहा ॥ १ ॥
परमात्मा को जब आत्मा में, लिया देख ज्ञान की आँखों से।
प्रकाश हुआ मन में उसके, कोई उससे भेद छिपा न रहा ॥ २ ॥
पुरुषार्थ ही इस दुनिया में, सब कामना पूरी करता है।
मन चाहा सुख उसने पाया, जो आलसी बन के पड़ा न रहा ॥३॥
दुखदायी हैं, सब शत्रु हैं, ये विषय हैं जितने दुनियाँ के।
वही पार हुआ भवसागर से, जो जाल में इनके फँसा न रहा ॥४॥
ये वेद विरुद्ध जब मत फैले, प्रकृति की पूजा जारी हुई।
जब वेद की विद्या लोप हुई, तो ज्ञान का पाँव जमा न रहा ॥५॥
यहाँ बड़े-बड़े महाराज हुए, बलवान् हुए, विद्वान् हुए।
पर मौत के पंजे से 'केवल', संसार कोई बचा न रहा ॥६॥
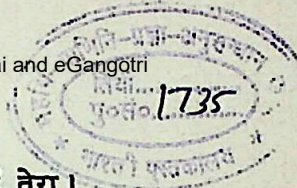
(१६)

शरण अपनी में रख लीजे, दयामय दास हूँ तेरा।
तुझे तजकर कहाँ जाऊँ, हितू को और है मेरा ॥ १ ॥
भटकता हूँ मैं मुद्दत से, नहीं विश्राम पाता हूँ।
दया की दृष्टि से देखो, नहीं तो डूबता बेड़ा ॥ २ ॥
सताया राग-द्वेषों का, तपाया तीन तापों का।
दुखाया जन्म-मृत्यु का, हुआ तंग हाल है मेरा ॥ ३ ॥
दुखों का मेटने वाला, तुम्हारा नाम सुनकर मैं।
शरण में आ गिरा अब तो, भरोसा नाथ है तेरा ॥ ४ ॥
क्षमा अपराध कर मेरे, फकत अब आश है तेरी।
दया 'बलदेव' पर करके, बना ले नाथ निज चेरा ॥ ५ ॥

(१७)

धन्य है तुमको ऐ ऋषि, तूने हमें जगा दिया।
सो सो के लुट रहे थे हम, तूने हमें जगा दिया ॥ १ ॥ धन्य०

अन्धों को आँखें मिल गईं, मुर्दों में जान आ गई।
जादू सा क्या चला दिया, अमृत सा क्या पिला दिया ॥ २ ॥ धन्य०

वाणी में क्या तासीर थी, तेरे वचन में ऐ ऋषि।
कितने शहीद हो गए, कितनों ने सिर कटा दिया ॥ ३ ॥ धन्य०

अपने लहू से लेखराम, तेरी कहानी लिख गया।
तूने ही लाला लाजपत, शेरे बबर बना दिया ॥ ४ ॥ धन्य०

श्रद्धा से श्रद्धानन्द ने, सीने में खाइँ गोलियाँ।
हँस-हँस के हंसराज ने, तन-मन व धन लुटा दिया ॥ ५ ॥ धन्य०

तेरे दिवाने ऐ ऋषि, दक्षिण दिशा को चल दिए।
वैदिक धर्म पै हो फिदा, दुनिया का दिल हिला दिया ॥ ६ ॥ धन्य०

(१८)

जिसमें तेरा नहीं विकास,
ऐसा कोई फूल नहीं है ॥ टेक ॥

मैंने देख लिया सब ठौर, तुझसा मिला न कोई और ।
सबका तू ही है सिरमौर, इसमें कुछ भी भूल नहीं है ॥ १ ॥

तुझसे मिलकर करुणानन्द ! मुनिवर पाते हैं आनन्द ।
तेरा प्रेम सच्चिदानन्द ! किसको मंगल-मूल नहीं है ॥ २ ॥

उर धर धर्म जीवनाधार, गुरुजन कहें पुकार-पुकार ।
उसका बेड़ा होगा पार, जिसके तू प्रतिकूल नहीं है ॥ ३ ॥

तेरा गाय अखिल गुण-ग्राम, करनी करता है निष्काम ।
मन में है शंकर सुखधाम, मेरे संशय-शूल नहीं है ॥ ४ ॥

(१९)

हे दयामय ! हम सबों को, शुद्धताई दीजिए ।
दूर करके हर बुराई, को भलाई दीजिएं ॥ १ ॥
ऐसी कृपा और अनुग्रह, हम पै हो परमात्मा ।
हों निवासी इस धरा के, सबके सब धर्मात्मा ॥ २ ॥
हो उजाला सबके मन में, ज्ञान के प्रकाश से ।
और अँधेरा दूर सारा, हो अविद्या-नाश से ॥ ३ ॥
खोटे कर्मों से बचें और, तेरे गुण गावें सभी ।
छूट जावें दुःख सारे, सुख सदा पावें सभी ॥ ४ ॥
सारी विद्याओं को सीखें, ज्ञान से भरपूर हों ।
शुभ करम में होवें तत्पर, दुष्ट गुण सब दूर हों ॥ ५ ॥
यज्ञ-हवन से हो सुगन्धित, अपना भारतवर्ष देश ।
वायु-जल सुखदाई होवें, जाएँ मिट सारे कलेश ॥ ६ ॥

(२०)

मगन ईश्वर की भक्ति में, अरे मन क्यों नहीं होता।
पड़ा आलस्य में मूरख, रहेगा कब तलक सोता॥ १॥
जो इच्छा है तेरे कट जाएँ, सारे मैल पापों के।
प्रभु के प्रेम-जल से क्यों, नहीं अपने को तू धोता॥ २॥
विषय और भोग में फँसकर, न कर बरबाद जीवन को।
दमन कर चित्त की वृत्ति, लगा ले योग में गोता॥ ३॥
नहीं संसार की वस्तु, कोई भी सुख की हेतु है।
वृथा इनके लिए फिर क्यों, समय अनमोल तू खोता॥ ४॥
धर्म ही एक ऐसा है, जो होगा अन्त को साथी।
न पत्नी काम आएगी, न भाई, पुत्र और पोता॥ ५॥
भटकता जा बजा नाहक, तू क्यों सुख के लिए सालिग।
तेरे हृदय के ही भीतर, बहे आनन्द का सोता॥ ६॥

(२१)

हे प्रेममय प्रभो तुम्हीं सबके अधार हो।
तुमको परम पिता प्रणाम बार बार हो॥ १॥
ऐसी कृपा करो कि हम सब धर्मवीर हों।
वैदिक पवित्र धर्म का जग में प्रचार हो॥ २॥
सन्देश देश-देश में वेदों का दें सुना।
समभाव और प्रेम का सबमें प्रसार हो॥ ३॥
असहाय के सहाय हों, उपकार हम करें।
अभिमान से बचें, हृदय निर्भय उदार हो॥ ४॥
फूले-फले संसार में यह रम्य वाटिका।
कर्तव्य का अपने सदा हमको विचार हो॥ ५॥
स्वाधीनता के मन्त्र का जप हम सदा करें।
सेवा में मातृभूमि के तन-मन निसार हो॥ ६॥

(२२)

जगदीश यह विनय है, जब प्राण तन से निकले।
प्रिय देश-देश रटते, यह प्राण तन से निकले॥ १॥
भारत वसुन्धरा पर, सुख शील-संयुता पर।
शुचि शस्य श्यामला पर, यह प्राण तन से निकले॥ २॥
देशाभिमान धरते, जातीय-गान करते।
निज देश-व्याधि हरते, यह प्राण तन से निकले॥ ३॥
दुख-दैन्य पर विजय हो, अज्ञान-रात्रि-क्षय हो।
भारत समृद्धिमय हो, तब प्राण तन से निकले॥ ४॥

२३. आरती

ओम् जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे।
भक्त-जनों के संकट, क्षण में दूर करे॥ १॥
जो ध्यावे फल पावे, दुख बिनसे मन का।
सुख सम्पति घर आवे, कष्ट मिटे तन का॥ २॥
मात पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किसकी ?
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी॥ ३॥
तुम पूरण परमात्मा, तुम अंतर्यामी।
पारब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी॥ ४॥
तुम करुणा के सागर, तुम पालनकर्ता।
मैं सेवक तुम स्वामी, कृपा करो भर्ता॥ ५॥
तुम हो एक अगोचर, सब के प्राणपती।
किस विधि मिलूँ दयामय, दीजे मोहिं सुमती॥ ६॥
दीनबंधु दुखहर्ता, तुम रक्षक मेरे।
करुणा-हस्त बढ़ाओ, द्वार पड़ा तेरे॥ ७॥
विषय-विकार मिटाओ, पाप हरो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ, सन्तन की सेवा॥ ८॥
ओम् जय जगदीश हरे.......।

ओ३म्

आर्यसमाज के नियम

१. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जा
आदिमूल परमेश्वर है ।

२. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्व
दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि
सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर,
पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसीकी उपासना करना योग्य है ।

३. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है । वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है ।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए ।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिएं ।

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है—अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना ।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक धर्मानुसार यथायोग्य वर्तना चाहिए ।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए ।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए ।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहनाचाहिए औरप्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

मुद्रक : लक्ष्मी प्रेस, बुलानाला, वाराणसी